मासिक

चंद्रभागा संवाद

पद्मश्री रामनाथ शास्त्री विशेषांक

पद्मश्री रामनाथ शास्त्री

(जन्म 14 अप्रैल 1914)

डोगरी संस्था के एक साहित्यिक समारोह में (2005)

92-वें जन्म दिवस 14 अप्रैल 2006 के शुभ अवसर पर

मंगल कामनाएँ
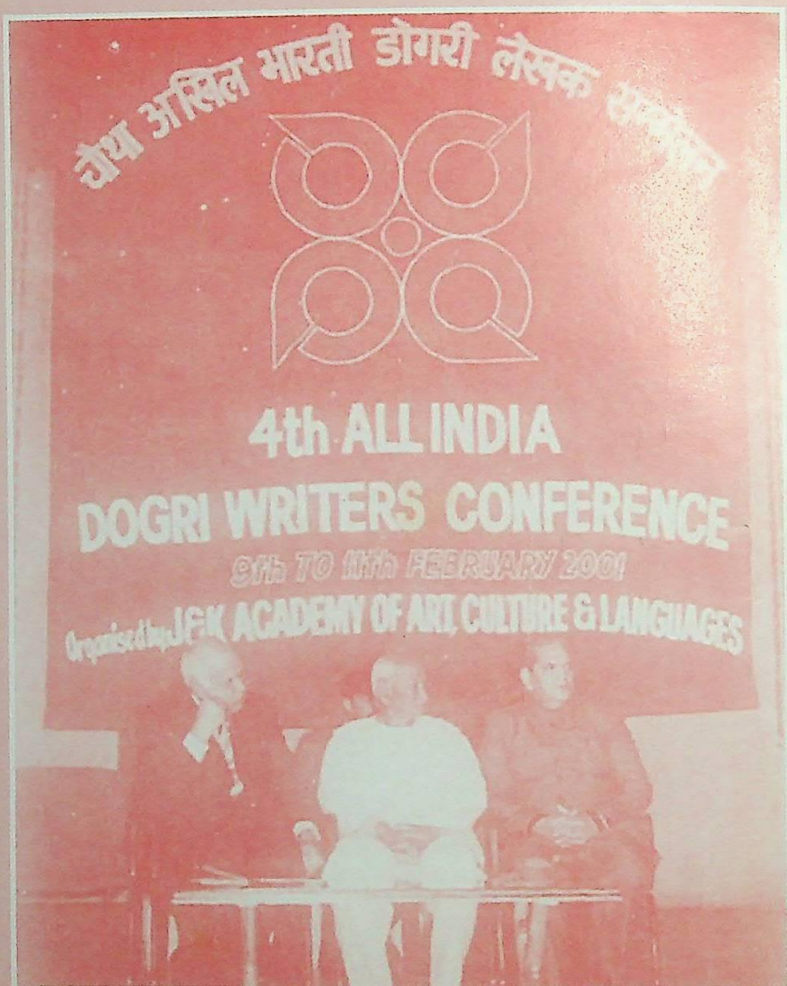
चौथे अखिल भारतीय डोगरी लेखक सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर (बाएं से) मुख्यमंत्री श्री फारूक अब्दुल्ला, पद्मश्री रामनाथ शास्त्री और शिक्षा मंत्री श्री मुहम्मद शफी उड़ी (2001 ई.)

पूर्ण रूप से स्ववित्तपोषित

चंद्रभागा संवाद

वर्ष : 14 अंक : 4

अप्रैल 2006

पद्मश्री रामनाथ शास्त्री विशेषांक

संपादक

सुतीक्ष्ण कुमार शर्मा 'आनंदम'
विद्यावाचस्पति

रेखांकन पृ०26-27

राजेन्द्र परदेसी (लखनऊ)

वार्षिक सहयोग : 100 रुपए

संपादकीय पत्र-व्यवहार

402-अंबफला
जम्मू (तवी) - 180 005
फोन : (0191)-2562224

इस अंक में

मुद्रक, प्रकाशक तथा स्वामी श्रीमती सुदर्शन शर्मा द्वारा क्लासिक प्रिंटर्स, बड़ी ब्राह्मणां, जम्मू (तवी) में छपा।

संपादक : सुतीक्ष्ण कुमार

A Page in 'Quiet Flows the Stream'

BY PROF. MADAN MOHAN SHARMA AND VED PAL 'DEEP'

Published in About 1968

Shri Ramnath Shastri

Sh. R.N. Shastri is the pioneer of the Dogri Cultural Movement that started about two decades ago. His dedication and continuous service to the cause of Dogri became a source of inspiration to a crop of younger poets and writers. His own contribution to the Dogri literature is great indeed. He has done a commandable work in the publication of various books in Dogri and has personally edited many of them. He is a versatile writer and has made his mark as a poet, playwriter, storywriter, Translator and critic. His play 'Bawa Jitto' was the first to be staged at various places and was much acclaimed by the people. His Translation of Tagore's play 'Sacrifice' was also staged with great success.

Shri Shastri's writings are rich in thought, content and have an intellectual appeal. His progressive outlook influenced the whole course of Dogri literary movent.

At present he is Professor of Sanskrit in the M.A.M. College, Jammu. His published works :

1. Ik Ha Raja. (Edited)
2. Bhartri Hari's Neeti Shatak. (Translation)
3. Bhartri Hari's Vairagya Shatak. (–do–)
4. Tagore's Geetanjli (–do–)

डोगरी कविता

शास्त्री जी

जगदीश चंद्र शर्मा*

प्रोफेसर हे साढ़े इक रामनाथ जी शास्त्री।
शैल खढ़ौने घढ़ने दी ही उंदे हत्थें ब्हादरी॥

पढ़दे हे उंदे कोला अस जदूं हे कालेज आए।
सच सनां तुसेंगी, उयै हे इक साढ़े मन भाए॥

खानां चा हीरे कड्ढने दी ही उनें गी शैल जाच।
करदे रौंह्दे हे ओ साढ़ी हर हरकता गी 'वाच'॥

तराशी-तराशी हीरें गी ओ लांदे रेह् नशान।
सच पुच्छो तां हीरें दी ही उनें गी बड़ी पंशान॥

विध्या दे मंदरा दे न ओ इक बड्डे पजारी।
कित्ती दी ही उनैं समाजा दे नां जिंदगी सारी॥

चंडेया उन्हैं असेंगी जियां लोहार लोहा चंडदा।
शैल कोई औज़ार बनाइयै जियां पिच्छूं फंडदा॥

मना बिच साढ़े उंदी बड़ी इज्जत ते मान।
करनेआं अज्ज बी अस उंदी दनाई दा बखान॥

चेता अज्ज बी जदूं करनें, साह् साढ़ा सुक्की जंदा।
सिर साढ़ा उन्दे अग्गें, अज्ज बी झुकी जंदा॥

उयां ते बड़े हे होर बी असेंई पढ़ाने आले।
पर कुत्थें लभदे न इयां हिरखा नै समझाने आले॥ ●

मकान नं-186, गली नं० - 7, तालाब तिल्लो, जम्मू-180002

---

* कवि सेवानिवृत्त अभियंता हैं। कालेज में शास्त्री जी के शिष्य रहे हैं।

डोगरी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के विकास में पद्मश्री प्रो. रामनाथ शास्त्री जी की भूमिका

डॉ० वीणा गुप्ता

"उन्नी सौ चालियें च बदेसी साम्राज दी गलामी कोला मुक्ति दे देस-व्यापक जन-आंदोलन ने रियासतें च दोहरी गलामी च जकड़ोई दी जनता गी बी झुनकेया हा। डोगरा पहाड़ी जाति दा दुर्भाग हा जे ओह् उस बेल्लै केइयें प्रशासक इकाइयें च बंडोई दी ही। साम्राजवाद ते सामंती स्वारथें ओह्दे बोध-बकास दे सारे रस्ते बंद कीते दे हे। दूए केइयें स्वारथें बी उसी दबाए दा हा। ऐसे न्हेरे पक्खै च, घने-घनोते बदलें दे घेरे च बिजली दी पतली रेखा चमकी ही। डोगरी संस्था जम्मू दी स्थापना बसंत पंचमी 1944 ई. दे मुबारक दिनै पर जम्मू च परेड ग्राऊंड दे इक सिरे पर पञ्जें गभरूएं कीती ही। साहित्यक ते सास्ंकृतक चेतना दा ओह् निक्का जनेहा निश्चा इ'नें 25-एं ब'रें च कि'यां इक थमां अनेक होइयै इस धरती दे जीवन-इतिहासै दा इक गौरवपूर्ण ध्याऽ बनी सकेआ ऐ—एह् इक बड़ी रोचक क्हानी ऐ।"

उन्नीस सौ चालीस में विदेशी साम्राज्य की दासता से मुक्ति के लिए देश-व्यापक जन-आंदोलन ने रियासतों में दोहरी दासता में जकड़ी हुई जनता को भी झकझोरा था। डोगरा पहाड़ी जाति का दुर्भाग्य था कि उस समय कई प्रशासक इकाइयों में विभाजित थी। साम्राज्यवाद और सामंती स्वार्थों ने उसके बोध-विकास के सभी मार्ग अवरुद्ध कर रखे थे। अन्य कई स्वार्थों ने भी उसे दबाव में रखा हुआ था। ऐसे अंधेरे पक्ष में, घने-घनेरे बादलों के घेरे में बिजली की धीमी रेखा चमकी थी। तब बसंत पंचमी 1944 ई० के शुभ दिन को जम्मू में परेड ग्राऊंड के एक सिरे पर पांच युवाओं ने डोगरी संस्था, जम्मू की स्थापना की थी।

साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना का वह छोटा-सा निर्णय इन पचीस वर्षों में कैसे एक से अनेक होकर इस धरती के जीवन-इतिहास का एक गौरवपूर्ण अध्याय बन सका है - यह एक बहुत रोचक कहानी है।

'डोगरी संस्था रजत जयंती ग्रंथ' में डोगरी संस्था की स्थापना के पचीस वर्ष पूरे होने पर पद्मश्री प्रो० रामनाथ शास्त्री ने डोगरी संस्था द्वारा पचीस वर्षों की अल्पावधि में डोगरियत के प्रति जनता की जागरूकता, लगन और कर्मठता के फलस्वरूप होने वाली उपलब्धियों को डुग्गर धरती के जीवन-इतिहास का गौरवपूर्ण अध्याय बताते हुए, इसे एक अत्यंत रोचक कहानी कहा है।

सचमुच ही यह कहानी है एक आंदोलन की जिसके बल पर डुग्गर, डोगरी और डोगरों का नाम है; जिसके बल पर डोगरी को साहित्य अकादेमी की मान्यता का गौरव प्राप्त हुआ और अब तक तीस से अधिक साहित्यकार साहित्य अकादेमी पुरस्कार से गौरवान्वित हो चुके हैं तथा डोगरी में अनुदित श्रेष्ठ साहित्य को भी यह गौरव प्राप्त हो रहा है। इसी आंदोलन के परिणाम स्वरूप रेडियो और दूरदर्शन से डोगरी समाचार एवं अन्य साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रसारित एवं टैलीकास्ट हो रहे हैं। इसी की वजह से आज डोगरी भाषा एक विषय के तौर पर इस प्रदेश के स्कूलों एवं कॉलेजों में पढ़ाई जा रही है और जम्मू विश्वविद्यालय में तो एक सम्पूर्ण सम्पन्न स्नातकोत्तर विभाग स्थापित हुआ है जहाँ एम० ए०, एम० फिल० और पी० एच० डी० स्तर पर डोगरी में अध्यापन और शोधकार्य हो रहा है। डोगरी विद्वान और साहित्यकार राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों, कांफ्रेंसों में भाग लेकर डोगरी भाषा, साहित्य, संस्कृति, लोकवार्ता आदि को बढ़ावा दे रहे हैं। जम्मू-कश्मीर अकादेमी में डोगरी भाषा, साहित्य एवं कला के क्षेत्र में विभिन्न स्तरों पर कार्य हो रहे हैं। इसी आंदोलन की देन है कि डोगरा समाज के लोगों ने अपनी भाषा के प्रति हीन भावना की प्रताड़ना से मुक्त होते हुए खुलकर डोगरी बोलने का साहस जुटाया है और आज राष्ट्रीय स्तर पर डोगरी सेमीनार, कांफ्रेंसें आदि विशेष आयोजन हो रहे हैं। जहाँ डोगरी भाषी डोगरी में बात करते हुए गौरव का अनुभव करते हैं। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूचि में डोगरी भाषा को स्थान प्राप्त होना भी इसी आंदोलन की देन है जिसके फलस्वरूप आज डोगरी साहित्य भारत के सर्वोत्तम साहित्यिक पुरस्कार 'ज्ञानपीठ' एवं 'सरस्वती सम्मान' से सम्मानित होने का गौरव प्राप्त कर सकता है। निस्संदेह इस आंदोलन में डुग्गर की जनता एवं अन्य कई साधकों का योगदान रहा है, किन्तु इसके सूत्रधार, बानी, अगुवा अथवा जन्मदाता (कुछ भी कहें) होने का श्रेय पद्मश्री

प्रो० रामनाथ शास्त्री जी को ही जाता है। स्व० पंडित संसार चन्द बड़ु, बी० पी० साठे, दीनू भाई पन्त, नारायण दत्त मिश्र और श्री धर्मचन्द प्रशांत जैसे साधक इस आंदोलन की नींव डाल कर इसे अग्रसर करने में प्रो० शास्त्री जी को अपना पूरा सहयोग देते रहे, किन्तु कल्पना की जाए कि यदि शास्त्री जी का नेतृत्व प्राप्त न होता तो इस आंदोलन का स्वरूप क्या होता? यह बात भी सर्वमान्य है कि दीनू भाई पन्त जी की "शैह्‌र पैह्‌लो पैह्‌ल गे" और "चाचे दूनी चंदै दा ब्याह्" जैसी कविताओं ने इस आंदोलन को बहुत बल दिया और संभवत: इन कविताओं के आकर्षण ने इस धरती के वासियों को इतना आकृष्ट किया कि उन्होंने इस आंदोलन में अपना पूरा सहयोग दिया किन्तु यदि यह आंदोलन जन्म न लेता और डोगरी अथवा डोगरियत को जनता तक न पहुँचाता तो "शैह्‌र पैह्‌लो पैह्‌ल गे" जैसी लोकप्रिय रचनाएं भी वर्तमान पीढ़ी अथवा भावी उत्तरदायियों तक पहुँचने पातीं? कहना न होगा कि इस समूचे आंदोलन का श्रेय डोगरी के अनन्य साधक पद्मश्री प्रो० रामनाथ शास्त्री जी को जाता है। वे अपने में न केवल एक संस्था हैं बल्कि डोगरियत रूपी आंदोलन के प्रमुख सूत्रधार हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि शास्त्री जी ने इस आंदोलन का केवल नेतृत्व ही नहीं किया अपितु इस आंदोलन रूपी अंकुर को अपनी लगन, साधना और कर्मठता के जल से सींचते हुए इस छोटी सी तहरीक को व्यापक संदर्भ प्रदान किए और यह एक ऐसा सत्य है जिसे उपेक्षित व अनदेखा नहीं किया जा सकता क्योंकि इस सच्चाई के तथ्य और प्रमाण हमारे समक्ष हैं :

- डोगरी और डोगरियत की कर्मस्थली अर्थात् "डोगरी संस्था, जम्मू" की स्थापना करना और फिर नियमित रूप से संस्था के कार्यालय - चाहे वह परेड ग्राऊंड का एक कोना था, दीवानों का मंदिर था, श्री नारायणदत्त मिश्र जी का निवास स्थान था अथवा पक्का डंगा म्यूनिसिपल मार्केट में वह दो कमरों का कार्यालय था – जाना और अपनी साधना का दीप जलाकर डोगरी संस्था और डोगरी आंदोलन की गतिविधियों को नियमित रूप से चलाना और अग्रसर करते जाना।

- डोगरी और डोगरियत के विषय में यहाँ की जनता में जागरूकता उत्पन्न करने को नैतिक दायित्व समझना और इस प्रदेश के देहाती इलाकों और मुफस्सलात में जा-जाकर कवि सम्मेलन, साहित्यिक गोष्ठियां, नाटक-मंचन आदि कार्यक्रमों का आयोजन कर जन-जन को अपनी भाषा एवं संस्कृति से परिचित करवाने में पूरी कर्मठता का प्रमाण देना।

- जम्मू-कश्मीर राज्य से बाहर विशेषकर हिमाचल-प्रदेश के डोगरा पहाड़ी लेखकों से सम्पर्क स्थापित कर उन्हें प्रेरित करना एवं इस जन-आंदोलन का हिस्सा बनाने में सक्रिय भूमिका निभाना, जिसके फलस्वरूप डोगरी की पत्र-पत्रिकाओं (नमीं चेतना, शीराज़ा डोगरी, साढ़ा साहित्य इत्यादि) में कितने ही हिमाचली लेखकों की रचनाएं प्रकाशित होती रही हैं और यह सहयोग अब तक बराबर बना हुआ है। यद्यपि राजनैतिक कारणों से हिमाचल प्रदेश की भाषायी नीति अलग है किन्तु डोगरी आयोजनों-क्रांफ्रेंसों, सैमीनारों आदि-को तथा डोगरी प्रकाशनों को हिमाचल के साहित्यकार अपना सक्रिय सहयोग देते रहे हैं और दे रहे हैं।

- डोगरी की सर्वप्रथम साहित्यिक पत्रिका 'नमीं चेतना' (त्रिमासिक) के नियमित और उच्चस्तरीय प्रकांशन में अपने दायित्व को एक लम्बी अवधि तक निभाना।

- डोगरी की साहित्यिक धरोहर की समृद्धि हेतु स्वयं भी मौलिक साहित्य सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना। उपन्यास को छोड़ लगभग प्रत्येक विधा को शास्त्री जी ने अपना सक्रिय योगदान दिया है : धरती दा रिन (कविता संकलन), बावा जित्तो (रंगमंचीय नाटक), बदनामी दी छां (कथा-संकलन), झकदियां किरणां (एकांकी नाटक-संकलन), नमां ग्रां (नाटक), तलखियां (ग़ज़ल-संग्रह), डुग्गर दे लोकनायक, बावा जित्तो (बावा जित्तो की लोकगाथा का ऐतिहासिक एवं साहित्यिक मूल्यांकन) कलमकार चरणसिंह आदि साहित्यिक एवं शोधपरक रचनाओं से डोगरी साहित्य को समृद्ध किया। मौलिक सृजन के अतिरिक्त विभिन्न भाषाओं की उत्कृष्ट कृतियों के डोगरी में सुंदर एवं सफल अनुवाद भी किए; जिनमें संस्कृत के छः उपनिषद्, भर्तृहरि के 'शतकत्रय', शूद्रक का 'मृच्छकटिकम्', भास के संस्कृत नाटक, रवीन्द्रनाथ टैगोर के 'बलिदान, मालिनी और डाकघर (नाटक) और 'गीतांजलि'(काव्यरचना), महात्मा गांधी की आत्मकथा, सी० राजगोपालाचारी की 'रामायण', विनोबा भावे के गीत प्रवचन, धर्मवीर भारती का नाटक 'अंधायुग' मैक्सिम गोर्की की 'लोअर डैप्थ्स' इत्यादि रचनाएं उल्लेखनीय हैं। शास्त्री जी ने बड़ी मात्रा में संपादन कार्य भी किए और डोगरी भाषा एवं साहित्य को समृद्धि प्रदान की। इस संदर्भ में यह बात स्मरणीय है कि 1953 ई० से प्रकाशित होने वाली डोगरी की सबसे पहली साहित्यिक पत्रिका ''नमीं चेतना'' के 86 अंकों का सम्पादन किया। इसके अतिरिक्त 'डोगरी डिक्शनरी' के छः भागों, 'डोगरी संस्था रजत जयंती

ग्रन्थ', 'नीहारिका' आदि अन्य कई प्रकाशनों के सम्पादन का श्रेय भी शास्त्री जी को जाता है।

कहने का तात्पर्य है कि इस आंदोलन की वह कौन सी राह एवं पगडंडी है जहाँ शास्त्री जी के पगचिह्न नहीं पड़े। जम्मू विश्वविद्यालय में डोगरी में तिलक, प्रवीण और शिरोमणि (प्रोफ़िशियंसी, हाई प्रोफ़िशियंसी और आर्नस) परीक्षाओं को आरंभ करवाने के बाद संस्कृत विभाग के सरंक्षण में 1970-71 ई० में 'डोगरी रिसर्च सेल' स्थापित किया गया था, जिसका श्रीगणेश शास्त्री जी की 'सीनियर फेलो इन डोगरी' के तौर पर नियुक्ति से हुआ था। बाद में यही सेल स्वतंत्र रूप से 1975 ई० में 'डोगरी रिसर्च सेंटर' और फिर 1983 ई० में 'स्नातकोत्तर डोगरी विभाग' के रूप में परिवर्तित हुआ।

इतना ही नहीं यदि डोगरी प्रकाशनों की भूमिकाओं, एवं सम्पादकियों इत्यादि पर या फिर डोगरी साहित्यकारों, बुद्धिजीवियों, विभिन्न क्षेत्रों एवं विभिन्न भाषाओं के विद्वानों, लेखकों; विभिन्न साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं-संगठनों के साथ हुए पत्र-व्यवहार (जिसका रिकार्ड शास्त्री जी के पास सुरक्षित है) पर दृष्टि डाली जाए तो यह तथ्य स्वतः प्रमाणित हो जाएगा कि डोगरी आंदोलन तथा प्रो० रामनाथ शास्त्री एक-दूसरे के पूरक हैं। डोगरी आंदोलन में से शास्त्री जी को अलग कर डोगरी आंदोलन की तस्वीर दिखाई नहीं पड़ती और शास्त्री जी के जीवन से डोगरी आंदोलन को अलग किया जाए तो उनके जीवन की रूपरेखा धुंधली पड़ जाती है या फिर एक-चौथाई भी शेष नहीं रहती।

आज इस डोगरी आंदोलन की आयु छः दशकों की अवधि पार कर चुकी है और लेखकों, कलाकारों एवं शोधकर्ताओं, बुद्धिजीवियों की आगे की दो पीढ़ियें इसमें आ मिली हैं; किन्तु शास्त्री जी की कर्मठता और साधना का दीपक बराबर देदीप्यमान है। आयु की भी कुछ अपेक्षाएं होती हैं तथा शारीरिक क्षमता भी सर्वदा एक समान नहीं रहती। इनका प्रभाव उनकी क्रियाशीलता पर निस्संदेह हो सकता है, किन्तु उनमें साहस, उत्साह, उद्यम और दृढ़ निश्चय का कदरे अभाव नहीं। शारीरिक क्षमता की विवशता के बावजूद शास्त्री जी अब भी कई नौजवानों से अधिक सक्रिय हैं तथा डोगरी एवं अन्य भाषाओं के सम्मेलनों-कार्यक्रमों को अपनी उपस्थिति-सरपरस्ती से शोभान्वित करते हैं।

शास्त्री जी के इस संघर्षमय जीवन एवं डोगरी आंदोलन में उनके योगदान के लिए उन्हें कई पुरस्कारों एवं सम्मानों से सम्मानित किया गया हैं। इनके कथा

संकलन ''बदनामी दी छां'' पर इन्हें वर्ष 1977 में 'साहित्य अकादेमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। जम्मू-कश्मीर अकादेमी की ओर से इनके ग़ज़ल-संग्रह ''तलखियां'' तथा ''डुग्गर दे लोकनायक'' पुस्तक के लिए पुरस्कृत किया गया। संस्कृत नाटक ''मृच्छकटिकम्'' के डोगरी अनुवाद ''मित्ती दी गड्डी'' के लिए शास्त्री जी साहित्य अकादेमी के अनुवाद -पुरस्कार से सम्मानित हुए। 1990 ई० में भारत के राष्ट्रपति द्वारा पद्मश्री एवं 1994 ई० में जम्मू विश्वविद्यालय द्वारा Doctor of Letters की मानद उपाधि से विभूषित हुए। इसके अतिरिक्त 'मुल्कराज सराफ पुरस्कार', जम्मू कश्मीर अकादेमी के 'मीट द एमिनेंट कंटम्परेरी' एवं डोगरी संस्था के विशेष सम्मान-समारोह में सम्मानित हुए। जम्मू विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर डोगरी विभाग की ओर से शास्त्री जी के जीवन काल की उपलब्धियों के लिए इनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर 3-4 दिसम्बर, 2001 को दो दिवसीय राष्ट्रीय सेमीनार में इन्हें विशेष सम्मान दिया गया। इससे पूर्व 20 जुलाई 2001 को साहित्य अकादेमी की सर्वोच्च सम्माननीय फैलोशिप प्रदान की गई जो इस प्रदेश के लिए हार्दिक प्रसन्नता एवं गौरव का विषय है।

डोगरी भाषा के इस आंदोलन को शिखर तक पहुंचाना और विशेषकर किसी संस्था की स्थापना कर उसके आदर्शों और असूलों पर पूरा उतरना और आधी सदी की अवधि तक नियमित रूप से सर्द, गर्म, सरस, नर्म हर स्थिति में नियमों का पालन कोई छोटी-मोटी बात नहीं। इस सब के पीछे इनकी कर्मठता की इष्ट भावना की ही प्रेरणा है। शास्त्री जी की कविता की ये पंक्तियां -

''जिन्दू दी रत जे फूको
तां गीतें दे दिये बलदे न
तां लोक इ'नेंगी तुपदे न
तां इंदी लोइया चलदे न''

उनकी इस इष्ट भावना का प्रमाण हैं।

अब **14 अप्रैल 2006** को शास्त्री की **92वीं वर्षगांठ** के अवसर पर प्रस्तुत लेखिका इस प्रदेश के समस्त संवेदनशील और बुद्धिजीवी वर्ग की ओर से शत-शत प्रणाम करते हुए उनकी दीर्घ आयु एवं स्वस्थ जीवन की कामना करती है। ●

प्रोफेसर, डोगरी विभाग,
जम्मू यूनिवर्सिटी,
जम्मू (जम्मू-कश्मीर - 180006)

डोगरी के भारतेंदु : प्रो० रामनाथ शास्त्री

देशबंधु डोगरा 'नूतन'

1958 ई० में प्रो० रामनाथ शास्त्री जी मेरे लिए एक बड़े पहाड़ के समान व्यक्ति थे। उस वर्ष मैं अमृतसर (पंजाब) में अपना उपन्यास 'जांगली लोग' हिन्दी भाषा में लिख रहा था और एक अध्याय सम्पूर्ण भी कर लिया था। मैंने शास्त्री जी को पत्र लिखा और उन्होंने उत्तर भेजकर प्रोत्साहित किया था। साथ ही कहा था कि हिंदी में लिखने वाले बहुत से लोग हैं किंतु डोगरी में लिखने वाले बहुत कम हैं। अतः मुझे चाहिए कि मैं मातृभाषा डोगरी में भी लिखूं और मैं ने 'जांगली लोग' को डोगरी में लिख दिया।

डोगरी में स्वयम् पुस्तक छापना बड़ा कठिन था और जम्मू-कश्मीर कल्चरल अकैडमी से अनुदान प्राप्त करके ही डोगरी-लेखक पुस्तकें छापा करते थे। मैंने 1961 मई में अपना डोगरी में 'हब्बा खातून' महाकाव्य राज्य के प्रधानमंत्री बक्शी गुलाम मुहम्मद को भेजा तो अकैडमी ने 'रिजेक्ट' कर दिया और इसी प्रकार अपना कहानी संग्रह 'आरां रंग' 1969 ई० में भेजा तो वह भी बैरंग लौट आया और हमनें अकैडमी का बहिष्कार कर दिया। किंतु 1977 ई० में प्रकाश प्रेमी के कहने पर 'कैदी' उपन्यास भेजा गया तो वह शास्त्री जी के हाथ लगा और अनुदान भी मिल गया। शास्त्री जी ने इसकी बड़ी प्रशंसा की और 'कैदी' उपन्यास पर 'नमीं चेतना' का विशेषांक नं० 56 भी प्रकाशित कर दिया।

शास्त्री जी मुझे बहुत स्नेह करते हैं और बहुत बार मैंने साहित्य पर उनसे भले ही झगड़ा भी किया होगा परंतु मुझ पर उनकी कृपा ही रही। कभी भी मेरे खिलाफ साज़िश में शामिल नहीं हुए। भगवत्प्रसाद साठे जी का कहना था (योजना 1959) कि शास्त्री जी डोगरी के भारतेंदु हैं। ●

अरुणिमा प्रकाशन, वार्ड नं०-2, इंदिरानगर,
उधमपुर (जे एंड के) - 182 101

शास्त्री जी : एक लाइट्हाऊस

डॉ० जितेंद्र उधमपुरी (फोन वार्ता)

प्रश्न : प्रो. रामनाथ शास्त्री से आपकी सर्वप्रथम भेंट?

उधमपुरी : मेरी सर्वप्रथम भेंट स्वाभाविक ही थी। जब मैंने हायर सैकंड्री स्कूल, उधमपुर से मैट्रिक पास की तो गांधी मेमोरियल साईंस कालेज की पी० यू० सी में 'एडमीशन' के लिए जम्मू में चला आया। उधमपुर से एक और लड़का ओम प्रकाश मगोत्रा मेरे साथ था। प्रो० रामनाथ शास्त्री जी उसके रिश्तेदार थे। उसने कहा कि उसे एडमीशन के लिए उनके पास जाना है। उसके साथ मैं भी चला गया। यह शायद 1959-60 साल की बात है। मैंने उनका नाम पहले भी सुना हुआ था। मैं बड़ा खुश हुआ। इतनी अच्छी 'पर्सनेलिटी'........ऊंचे लंबे और सरल। मैंने सिर झुकाया और उनके पांवों को छू कर चरण-वंदना की और उनके साथ हो लिया। वहाँ उन दिनों साईंस कालेज में घनश्याम जी प्रिंसिपल थे। सब कुछ कर करा के शास्त्री जी ने हमें एडमीशन दिलाई। मुझे याद है इसके बाद वे हमें रास्ते में एक जूस वाली दुकान में ले गए। हम दोनों को जूस पिलाया। मन ही मन मैं बहुत ही मुतासिर हुआ, प्रभावित हुआ।

प्रश्न : उसके पश्चात् कब भेंट हुई और उन्हें कैसा पाया?

उधमपुरी : मैं रणबीर हायर सैंकड्री स्कूल, जम्मू में टीचर था। जब मेरी 'सिलेक्शन' कल्चरल अकैडमी में हो गई। उन दिनों अकैडमी का कार्यालय मौजूदा टेलीफून एक्सचेंज के पास था और शास्त्री जी वहां डोगरी-डोगरी डिक्शनरी प्राजेक्ट में चीफ-एडिटर हुआ करते थे। मैं उनके साथ ही जूनियर-एडिटर लग गया। यह 1970 से 1976 ई० तक की बात है। मुझे लगभग छ: साल तक उनके साथ काम करने और कुछ सीखने का मौका मिला। यह दरअसल मेरी ज़िंदगी में एक नया मोड़ लाने वाली बात भी थी। मैं उनके साथ उसी कमरे में बैठा करता था।

साहित्य अकादमी, दिल्ली द्वारा डोगरी की 'मान्यता' के लिए या कहीं ओर से जो भी आवश्यक चिट्ठियां आया करती थीं, शास्त्री जी उन्हें डोगरी के साथ जुड़े हुए लेखकों और कवियों को सुनाया करते थे और उन पर विचार विमर्श किया

करते थे। ये लेखक और कवि जम्मू-कश्मीर के अतिरिक्त हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, बम्बई इत्यादि से हुआ करते थे।

प्रश्न : शास्त्री जी की कोई विशेषता ?

उधमपुरी : जहाँ भी शास्त्री जी जाते थे, वह चाहे ऑफिस हो चाहे घर हो, वहीं एक अदबी महफिल लग जाती थी। इनके साथ बैठने में ऐसे लगता था जैसे हम किसी बड़े अदब-शनास के पास बैठे हैं और जहाँ सीखने के लिए बहुत कुछ है।

प्रश्न : उनके साथ आपके कोई व्यक्तिगत अनुभव?

उधमपुरी : एक बार ऐसा हुआ कि मैंने उनसे कहा कि हमारे हां डोगरी साहित्य का इतिहास है। वह केवल 'इंट्रोडक्ट्री' है जिसे प्रो० नीलांबर देव जी ने लिखा है। वह 1965 तक खतम हो जाता है। फिर उसमें कुछ 'कवि' ऐसे हैं या कुछ 'लेखक' ऐसे हैं जिनकी कोई खास 'कांट्रीब्यूशन' नहीं है। उनको भी प्रो० नीलांबर देव जी ने पांच-पांच पृष्ट दे दिए हैं। क्यों न डोगरी साहित्य का ऐसा इतिहास लिखा जाए जिसमें 1965 के बाद का हिस्सा भी शामिल किया जाए। आप प्रो० नीलांबर देव जी से कहें कि वह इसका 'संशोधित संस्करण' छापें।

उसके उन्होंने (नीलांबर देव जी ने) उर्दू, पंजाबी, डोगरी और हिंदी अनुवाद भी छपवाए। मुझे याद है उसका उर्दू अनुवाद ठाकुर पुंछी ने और हिंदी अनुवाद प्रो० सुभाष भारद्वाज ने किया था।

वे मेरे संवरने और बनने के दिन थे। वैसे तो मैंने 1960 से ही लिखना शुरू कर दिया था। मैं उर्दू में लिखा करता था और मेरी ग़ज़लें मिलाप और प्रताप में छपा करती थीं। अगर मैं डोगरी की तरफ मुड़ा तो वह प्रो० रामनाथ शास्त्री जी की प्रेरणा से था। मुझे भी एहसास हुआ कि मुझे भी अपनी मातृभाषा क़ा ऋण चुकाना है। हिंदी के साथ-साथ डोगरी में लगातार लेखन करता रहा।

प्रो० नीलांबर देव के 'संशोधित संस्करण' की बात पर उन्होंने मुझे कह दिया, 'यह काम तो आप भी कर सकते हो?' यह बात चुभ गई मुझे। पता नहीं उन्होंने मुझे 'टांट' किया था या....सचमुच उनका ऐसा ही इरादा था। उनके यों कहते ही मैं उस कार्य में जुट गया। वह जो डोगरी साहित्य का इतिहास है, पाँच सौ पांच सफे का बड़े 'साईज़' में है जिसे चार साल लगाए मैंने लिखने में। यों समझिए कि उसके पीछे भी शास्त्री जी की प्रेरणा थी। उसे जम्मू-कश्मीर बोर्ड आफ स्कूल एजुकेशन ने छापा था। डोगरी साहित्य का यही इतिहास है जिसे आप सच्चे अर्थों में इतिहास की संज्ञा दे सकते हैं। यह बारहवीं, बी. ए., एम. ए. के पाठ्यक्रमों के

अलावा के. ए. एस और आई. ए. एस. के लिए संदर्भ ग्रंथ के रूप में लगा है। इसके लिए मैंने टेबल वर्क के साथ-साथ फील्ड वर्क भी किया है।

कुछ समय उपरांत एक बार फिर ऐसा हुआ कि मैंने शास्त्री जी से कहा, 'शास्त्री जी! हमारी भाषा में कहानियां लिखी जा रही हैं, कविता का भी काफी काम हुआ है। 'मधुकर', वेदपाल 'दीप' और यश शर्मा जैसे शायर हमारे पास हैं। पद्मा जी हैं। क्यों न ये लोग कोई महाकाव्य भी लिखें? कुरुक्षेत्र की तरह या कामायनी की तरह, मीरा की तरह या हल्दीघाटी की तरह कोई महाकाव्य डोगरी में भी आंए।

तब भी शास्त्री जी का उसी तरह का जवाब था, 'आप क्यों नहीं लिख सकते?'

डोगरी में मेरा पहला महाकाव्य दो सौ साठ सफों का 'जित्तो' एक वज़न में, एक छंद और एक लय-ताल में है। इस सुंदर और प्रभावपूर्ण महाकाव्य के पीछे भी उन्हीं की प्रेरणा है।

प्रश्न : शास्त्री जी, डोगरी और डोगरी संस्था?

उधमपुरी : शास्त्री जी बहुत अच्छे वक्ता हैं, बहुत अच्छा बोलते हैं। बड़े अच्छे संयोजक हैं और किसी भी कार्य को भली भांति करना और निभाना जानते हैं। लगभग पचास साल तक डोगरी संस्था के सैक्रेट्री रहे। यह हर रोज बिला-नागा डोगरी संस्था में आते थे। छोटा-सा कमरा था पक्का डंगा में। यों समझें कि छोटा-सा साहित्य का मंदिर था। जहाँ नियमित गोष्ठियां होतीं थी जिनमें विविध साहित्यिक रचनाएं पढ़ी जातीं थी और उन पर आलोचना समालोचना होती थी, चर्चा होती थी। यह शास्त्री जी की बड़ी देन है।

यह भी एक कुदरत की देन ही समझिये। डोगरी संस्था जब पक्का डंगा में थी। बिलकुल संस्था के सामने किराए के मकान में मैं रहता था। संस्था में मैं बहुत कम जाया करता था। लेकिन जितनी बार भी गया, प्रभावित ज़रूर हुआ। शास्त्री जी में जैसी कर्मनिष्ठा थी, इस तरह के आदमी आपको बहुत कम मिलेंगे।

प्रश्न : डोगरी के पक्ष में शास्त्री जी की उपलब्धियां?

उधमपुरी : उन्होंने बहुत काम किया डोगरी के लिए। सच्ची बात यह कि डोगरी को एक दिशा दी उन्होंने। डोगरी को 'डायलेक्ट' से भाषा बनाने में उन का बहुत बड़ा योगदान रहा। बेशक यह एक काफिला है। काफिला में हर आदमी का अपना अपना 'रोल' है। उन्हें आप मीरे-कारवां भी कह सकते हैं। उनकी और उनके साथियों की कोशिशों से डोगरी को 1969 में मान्यता मिली। 1969 में शिरोमणी की

कलास शुरू हुई। उससे पहले 1964 से तिलक और प्रवीण की क्लासें शुरू हो चुकीं थीं पहले वर्ष के डोगरी में शिरोमणी का इम्तिहान मैंने भी दिया था। मेरी दूसरी पोज़ीशन आई थी जबकि नरसिंह देव जम्वाल की पहली पोज़ीशन आई थी।

साहित्य अकादमी ने डोगरी को करीब करीब 1969 में मान्यता दी थी। नरेंद्र खजूरिया की कहानियों की किताब थी–'नीला अंबर काले बद्दल'। उसी को साहित्य अकादेमी का मरणोपरांत पहला पुरस्कार मिला। मेरे ख्याल में वे डोगरी की बेहतरीन कहानियां थीं और आज भी हैं।

प्रश्न : और कुछ ?

उधमपुरी : कई बार शास्त्री जी के साथ मुशायरे पढ़ने का अवंसर मिला। डोगरी संस्था जगह-जगह नाटक खेलती थी। मुशायरे भी गांव-गांव जाकर करती थी। शाम को हम शास्त्री जी के साथ निकल जाते थे। रात तक मुशायरे होते थे। तारों की छांव तले रात कटती थी।

प्रश्न : फिर कुछ ?

उधमपुरी : शास्त्री जी से मुझे बहुत प्यार मिला। यों समझिये जैसे मां से प्यार मिलता है। पिता से प्यार मिलता है। झिड़कें भी मिलती थीं। प्यार भी मिलता था। लिखने की प्रेरणा भी मिलती थी।

मैं जानता हूँ कि दो महानुभावों ने डोगरी के प्रचार-प्रसार के लिए बहुत काम किया है। पद्मा ने जम्मू-कश्मीर से बाहिर और शास्त्री जी ने जम्मू-कश्मीर के अंदर। डोगरी को शायद कुछ और साल लग जाते यहां तक पहुंचने में अगर शास्त्री जी का योगदान न होता।

शास्त्री जी एक योग्य व्यक्ति हैं। वे जानते हैं कि कौन सा काम किस तरह से करना है। मंज़िल तक कैसे पहुंचना है।

प्रश्न : अंत में कुछ

उधमपुरी : शास्त्री जी को यदि एक 'लाइट-हाऊस' कहें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। उन्होंने ने तो डोगरी में लिखने वालों को रोशनी बांटी है। जो आज भी मिलती है। आगे भी दिशा निर्देश देती रहेगी। जितनी ज़्यादा किताबें छपेंगी, जितनी ज़्यादा 'मैगज़ीन' छपेंगे, न्यूज़-पेपर छपेंगे और जितनी संस्थाएं बनेंगी उतनी ही डोगरी की प्रगति होगी। ●

पूर्व निदेशक आकाशवाणी
1-सुभाषनगर, जम्मू (तवी)-180005

शास्त्री जी एक कर्मठ व्यक्ति

पद्मश्री पद्मा सचदेव

जब मैंने होश सम्भाली-शायद मैं छ: सात बरस की थी या उससे भी कम की तब मैंने अपने ताऊ जी पं० चक्रपाणि जी को कहते सुना, 'आज यहाँ शास्त्री जी पुरमंडल आने वाले हैं।' वहां एक पाठशाला हुआ करती थी। शास्त्री जी शायद उसके निरीक्षण के लिए आ रहे थे। तब मैं बहुत छोटी थी। इतनी बातें मुझे याद नहीं हैं। सिर्फ यह याद है कि ताऊ जी की बैठक में जा कर मैंने शास्त्री जी को प्रणाम किया था और उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा था। फिर अपने पिता जी के साथ मैं दो मरतबा उनसे मिली थी और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया था।

उसके बाद जब 1947 ई० में मेरे पिता प्रो० जयदेव बड़ु जी नहीं रहे तब भी शायद शास्त्री जी हमारे घर आए थे।

तब जम्मू बड़ा खूबसूरत शहर था। डोगरों का शहर था। आज का जो जम्मू है उसे मैं कहती हूँ, कूड़ा घर है। क्योंकि आज अगर आप पूरा शहर घूमकर आएं तो एक भी औरत आपको दिखाई नहीं देती जिसने डोगरी सुत्थन खिलका कुरता पहना हो और दुपट्टा लिया हो। कोई आदमी दिखाई नहीं देता जिसने डोगरी पोशाक पहनी हो । शास्त्री जी एकदम डोगरा लगते हैं देखने में और उनके भीतर डोगरी कूट कूट कर भरी हुई है। ऐसा लगता है जैसे डोगरी संस्था का नाम और शास्त्री जी का नाम एक ही हों।

शास्त्री जी अकेले नहीं थे। बहुत लोग उनके साथ थे। संसार चंद जी बड़ु 'धर्मचंद्र प्रशांत जी, शिवनाथ जी, शम्भुनाथ जी, पंदोत्रा हसंराज जी थे और भी बहुत लोग थे। एक कारवां था लेकिन जो आगे चलता था वह रामनाथ शास्त्री था।

मैं दावे से कह सकती हूँ कि जम्मू में जितने भी डोगरी में लिखने वाले हैं, उनमें से कोई भी ऐसा नहीं होना चाहिए जो छाती पर हाथ रख कर कह

सके कि शास्त्री जी से मुझे प्रेरणा नहीं मिली। शास्त्री जी का बोलने का तरीका, शास्त्री जी की वाह यह बहुत बड़ी चीज़ थी। मैं जब नई नई डोगरी संस्था में गई और मैंने लिखना शुरू किया तो देखा, जब शास्त्री जी वाह करते थे तो लगता था कि कुछ हुआ है। ऐसा कुछ नहीं है कि कोई आपसे लिखवा सकता है। लेकिन यह था कि 'वाह' जो थी वह एक दम मन से निकलती थी और मन तक पहुंचती थी। इच्छा होती थी कि अगली बार कुछ ऐसा लिखा जाए कि शास्त्री जी की 'वाह' बहुत वज़नदार निकले। मैंने तो बहुत प्रेरणा ली है उनसे।

उनका बोलने का भी तरीका था। उनका लोगों से बात करने का भी तरीका था। नए-नए लोग जो आते थे उनको प्रोत्साहन देने का भी तरीका था। नए नए लोगों को ऐसे करो, ऐसे नहीं करो-समझाने का भी तरीका था। एक 'एडवेंचर' की तरह सब चल रहा था। सभी मिल कर काम करते थे लेकिन आज ऐसा नहीं है। आज आप डोगरी संस्था में जाइए। किसी से कहिए कि यह नुक्ता ठीक नहीं है या तुम्हारा वज़न कम या ज़्यादा हो रहा तो वह आपका सिर फाड़ देगा। 1955-56 में जब मैं डोगरी संस्था में जाती थी तब अकेली लड़की एक कोने में बैठी रहती थी। धर्मचंद्र प्रशांत जी के दफ्तर में तीसरे माले पर एक कमरा था छोटा सा जो भरा रहता था। मैं अक्सर कांपती रहती थी मन में मैं हंसती भी नही थी। किसी को देखती भी नहीं थी। शास्त्री जी के छोटे भाई नरेंदर खजूरिया कहा करते थे, 'तुम्मी हस्सी लै कर कुसा-कुसां बेल्लै।' (तू भी हंस लिया कर कभी कभी)। मैं सोचती थी कि यहां सब बजुर्ग हैं। शास्त्री जी तो मेरे पिता समान हैं। मैं आपको यह बता दूँ कि जो मेरी बेटी है सिर्फ एक आदमी को नाना कहती है और वह शास्त्री जी हैं।

अगर मैं शास्त्री जी की पत्नी की बात न करूं तो बड़ी ज़्यादती होगी। शास्त्री जी एक महान पुरुष हैं। महान पुरुष हैं। शास्त्री जी की महानता के पीछे एक स्त्री छिपी है जो बड़ी सुंदर और पूर्णतया समर्पित, सदगुणों से भरी हुई है। वह शास्त्री जी की पत्नी है। मैं उन्हें मासी जी कहती थी। मुझे याद है एक बार शाम को मैं वहां गई तो 'मधुकर' की बेटी आई और शास्त्री जी की पत्नी से बोली, 'ताई जी, तुसाढे घार चाऽर ऐऽ?' (ताई जी! आपके घर में अचार है?)

उन्होंने कहा, 'हाँ' है। हमारे घर आंचार है। पर तुमने क्या करना है अचार, तो वह बोली, 'मैंने खाना है।'

तू अचार रूखा ही खाएगी?

– 'नहीं! मैं आंचार आंचार के साथ खाऊंगी।'

तभी शास्त्री जी की पत्नी भीतर गई और एक फुलके या परांठे पर आंचार रखकर ले आई और उसे दे दिया। उनकी ममता का यह स्वरूप शास्त्री जी के लिए गर्व और स्वाभिमान का विषय है।

मैं जब भी जम्मू जाती हूँ, सब से पहले पूछती हूँ, 'शास्त्री जी कैसे हैं?' उसी मोहल्ले में मेरा मायका है। आशुतोष और ज्ञानेश्वर वहां रहते हैं। ज्ञानेश्वर अक्सर उनके पास जाता रहता है।

कौन सी विधा ऐसी है जिसमें शास्त्री जी ने नहीं लिखा? कवि हैं, कहानीकार हैं, नाटककार हैं, निबंध लेखक हैं, अनुवादक और संपादक हैं। कितनी ही पुरानी किताबें आप देखें–उनका संपादन रामनाथ शास्त्री ने किया हुआ है। डोगरी को उन्होंने इतना दिया है कि डोगरी का अतीत रामनाथ शास्त्री के साथ जुड़ा हुआ है।

शास्त्री जी हमेशा डोगरी को देते आए हैं। लेने का तो उनका अपने आप हक बनता है। जो जो उनको मिला है, मैं समझती हूँ वह बहुत ज़्यादा नहीं है। साहित्य अकादेमी ने तो बहुत देर पहले मान्यता दे दी थी लेकिन जब से डोगरी 'आठवें शैडयूल' में आई है तब से शास्त्री जी को मैं समझती हूँ हिन्दूस्तान में जितने भी बड़े बड़े लेखकों को जो कुछ भी मिला है, उनको भी मिलना चाहिए।

शास्त्री जी एक कर्मठ व्यक्ति हैं। पहाड़ी इलाके के होने पर उनमें कर्मनिष्ठा बहुत है। मैंने उनको एक विद्वान के रूप में, एक पिता के रूप में देखा हुआ है।

शास्त्री जी से मिलना बहुत आसान है। जब से डोगरी साहित्य शुरू हुआ है तब से आप पुस्तकें देखिए। हर पुस्तक में शास्त्री जी होते हैं। अगर वह उनका लिखा हुआ नहीं होता तो भी पुस्तक का संपादन इत्यादि उनका होता है।

मैं भगवान् से प्रार्थना करती हूँ कि शास्त्री जी का हाथ हमारे सिर पर बना रहे। जैसे हमारे ऊपर आसमान है, वैसे ही शास्त्री जी का दर्जा है। ●

(बी-242 चित्तरंजन पार्क, नई दिल्ली-110019)

प्रो० रामनाथ शास्त्री : एक विलक्षण प्रतिभा

डॉ० चम्पा शर्मा

प्रो० रामनाथ शास्त्री जी से मेरा परिचय गत चालीस वर्षों से है। 1966 ई० में डोगरी कवि चरणसिंह के साथ डोगरी संस्था के पक्का डंगा कार्यालय में एक साहित्यिक गोष्ठी में यह मेरी पहिली उपस्थिति थी। कवि चरणसिंह हमारे घर में किरायेदार था। गोष्ठी के लिये उपस्थित व्यक्तियों में एक चेहरा विलक्षण दिखाई दिया। सफेद कुर्ता-पायजामा पहने, ऊपर बास्काट लगाए प्रभावपूर्ण बातचीत करने वाला यह व्यक्ति ही प्रो० रामनाथ शास्त्री जी थे। पहिले-पहिले तो शास्त्री जी से बात करने में संकोच होता था। धीरे-धीरे यह झिझक दूर हो गई। फिर संस्था द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेने के सिलसिले में जम्मू नगर के अलावा बाह्य स्थानों भद्दू, रियासी, कटरा, मानसर, कठूआ, पुंछ और दिल्ली भी जाना होता रहा। संस्था की कार्यकारिणी में काम करने और डोगरी भवन ट्रस्ट का गठन करने में अन्य लेखकों के साथ मैं भी शामिल होती थी। शास्त्री जी को समझने का अवसर मिलता रहा।

संयोगवश प्रो० शास्त्री का जन्मवर्ष (1914 ई०) मेरे पिता पं० दीवान चंद शर्मा जी का भी जन्म-वर्ष है। इसलिये मैंने इन्हें सदा पिता सदृश ही माना है। इनकी कही बात को आदेश मानकर चलती रही। इन्हीं के कहने पर 'डोगरी काव्य चर्चा' नामक पुस्तक लिखी जो 1969 ई० में मेरी पहिली प्रकाशित पुस्तक कहलायी। पिता-तुल्य प्रो० शास्त्री जी ने हमारे परिवार में घटने वाली हर सुखद-दुखद घटना में उपस्थित होकर हमें अनुगृहीत किया है। मैं आभारी हूँ उनकी।

संस्कृत, हिन्दी डोगरी के प्रख्यात विद्वान् पद्मश्री प्रो० रामनाथ शास्त्री जी एक चिन्तनशील कवि ग़ज़ल गो-शायर, विचारवान, निबन्ध लेखक, कहानीकार, पत्रकार, नाटककार, आलोचक, लोकवार्ता-विशेषज्ञ एवं सफल अनुवादक हैं। अपनी सृजनात्मक साहित्यिक यात्रा का आरम्भ इन्होंने हिन्दी कहानी और निबन्ध से किया। तत्पश्चात्

डोगरी भाषा के साहित्यिक बोध विकास के लिये जब मन में संकल्प ले लिया तो उत्तरोत्तर आगे बढ़ते ही गये। इनकी प्रकाशित मौलिक रचनाओं में 'बावा जित्तो' (1973 ई०) कलमकार चरण सिंह, 'बदनामी दी छां' (1973 ई०) 'झकदियां किरणां' (1975 ई०) 'धरती दा रिन' (1977 ई०) 'तलखियां' (1980 ई०) प्रमुख हैं। 'नमां ग्रां' नाटक 1956 ई० में 'दीनू भाई पन्त' तथा 'रामकुमार अबरोल' के सहयोग में लिखा। डोगरी-डोगरी डिक्शनरी का मुख्य संपादन (1977-1987 ई०) भी कल्चरल अकैडमी में सम्पन्न किया।

प्रो० शास्त्री जी ने संस्कृत, हिन्दी, बंगाली, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं की उत्कृष्ट रचनाओं के डोगरी भाषा में अनुवाद करके डोगरी साहित्य को समृद्ध किया। संस्कृत नाटककार शुद्रक के प्रसिद्ध नाटक 'मृच्छकटिकम्' का 'मित्ती दी गड्डी' नाम से अनुवाद, नाटककार भास के चारु नाटकों का अनुवाद, रवीन्द्रनाथ टैगोर के नाटकों का डोगरी में बलिदान, डाकघर, मालिनी नाम से अनुवाद, संस्कृत नाटक भवदज्जुकीयम का अनुवाद इसी नाम से, 'मत्तविलास' का अनुवाद, धर्मवीर भारती के 'अन्धायुग' हिन्दी नाटक का' 'अन्नायुग' नाम से डोगरी अनुवाद, गोर्की के 'लोअर डैप्थ्स' का अनुवाद, 'पतालवासी' नाम से, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी की रामायण और टैगोर की 'गीतांजलि' का इसी नाम से अनुवाद, महात्मा गांधी की 'आत्मकथा' का अनुवाद, विनोवा भावे के 'गीता प्रवचन' का अनुवाद, छह उपनिषदों का अनुवाद, भर्तृहरि के नीतिशतक, वैराग्य शतक का अनुवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

प्रो० शास्त्री जी ने अपने कुछ साथियों के साथ मिलकर 1944 ई० की बसन्त पंचमी के दिन डोगरी संस्था की स्थापना की जहां साहित्यिक गोष्ठियां गतिविधियां नियमित रूप से होने लगीं। स्वयं भी लिखते रहे और अन्यों को भी प्रेरित करते रहे। न केवल जम्मू नगर में ही अपितु जम्मू से बाहिर भी डोगरी के विकास हेतू सैमीनारों, कान्फ्रैन्सों, कार्यशालाओं के आयोजन में इनका बड़ा म्हत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो० शास्त्री की साहित्यिक सेवाओं के लिए इन्हें कई पुरस्कारों से समय-समय पर पुरस्कृत किया गया है। इनको 'बदनामी दी छां' के लिए 1977 ई० में साहित्य अकादमी पुरस्कार से, 1981 ई० में ग़ज़ल संग्रह 'तलखियां', 1991 ई० में 'डुग्गर दे लोकनायक' के लिए जम्मू-कश्मीर कल्चरल अकैडमी के पुरस्कारों से और 1989 ई० में 'मृच्छकटिकम्' के डोगरी अनुवाद 'मित्ती दी गड्डी' पर साहित्य अकादमी अनुवाद-पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। इनके अतिरिक्त प्रो० शास्त्री को स्टेट कल्चरल अकैडमी द्वारा 1989 ई० में 'मीट द इमीनेंट कंटेम्परेरी' प्रोग्राम के अन्तर्गत सम्मानित किया गया। *(शेष पृ 20 पर)*

डोगरी के गोपबंधु दास : प्रो. रामनाथ शास्त्री

प्रो. शिव निर्मोही

प्रो. रामनाथ शास्त्री मेरे आदर्श हैं। मेरी दृष्टि में वे एक युग-पुरुष, महान चिंतक, विचारक और दार्शनिक हैं। जिस प्रकार गोपबंधु दास ने उड़िया को बँगाली से अलग दिखाकर उसे एक साहित्यिक भाषा का रूप दिया वैसे ही प्रो. रामनाथ शास्त्री ने डोगरी को एक साहित्यिक भाषा की पहचान दे कर यह सिद्ध किया कि डोगरी पंजाबी की उपभाषा नहीं अपितु एक स्वतंत्र विकसित भाषा है।

प्रो. रामनाथ शास्त्री नये युग के निर्माता भी हैं। मैं उनको बचपन से जानता हूं। मैंने उन्हें पहली बार सन् 1947 ई. में पैंथल (उधमपुर) में एक जन-सभा को संबोधित करते सुना था। तब उन्होंने लोगों को नए परिवर्तनों के अनुरूप अपने को ढालने के लिए प्रेरित किया था। प्रो. शास्त्री को दूसरी बार मैंने सन् 1948 ई. में टिक्करी के महा-अधिवेषण में कलाकारों को 'बावा जित्तो' नाटक का निर्देशन देते हुए देखा था। वे इस नाटक के द्वारा जन-चेतना को जगाने का प्रयास कर रहे थे। तदुपरांत मेरी उनसे एक के बाद एक भेटों का क्रम चलता रहा। वे मुझे परखते रहे और मैं उनके मार्ग निर्देशन में डोगरीयत की खोज में लगा रहा। आज मैं अनुभव करता हूँ कि प्रो. रामनाथ शास्त्री डुग्गर डोगरी और डोगरीयत का प्रतिरूप हैं। ●

(गांव तथा डाकघर पैंथल, उधमपुर, जे. एंड के. - 182121)

विलक्षण प्रतिभा ....पृष्ठ 19 का शेष

1990 ई० में भारत के राष्ट्रपति द्वारा पद्मश्री से, 1989 ई० में मुल्कराज सराफ़ पुरस्कार से और 1994 ई० में जम्मू यूनिवर्सिटी द्वारा डी० लिट की मानद उपाधि से अलंकृत प्रो० रामनाथ शास्त्री डोगरी के गौरवशाली व्यक्तित्व हैं। साहित्य अकादमी के सम्मान 'महत्तर सदस्यता' पाने वाले प्रथम डोगरी साहित्यकार हैं।

आयु के नवदशक पूरा कर लेने पर भी प्रो० शास्त्री पहले जैसा ही व्यवस्थित जीवन-यापन कर रहे हैं। मित्रों परिचितों की खबर रखते हैं। हम सब डोगरी के सेवक इनके सुखद-स्वस्थ दीर्घ जीवन की कामना करते हैं। ●

2/65-त्रिकुटा नगर, जम्मू (तवी)-180004

प्रेरणा के अग्रदूत : पद्मश्री रामनाथ शास्त्री

छत्रपाल

आधुनिक डोगरी साहित्य के पितामह प्रोफेसर रामनाथ शास्त्री अपने जीवन काल में ही एक प्रेरक गाथा बन चुके हैं। उनके सान्निध्य में डोगरी लेखकों, कवियों और साहित्यकारों की तीन पीढ़ियों ने डोगरी साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया और बहुमूल्य योगदान दिया। अपने चन्द सहयोगिओं के साथ ईस्वी सन् 1944 में डोगरी संस्था की स्थापना के साथ ही शास्त्री जी ने डोगरी भाषा, साहित्य और संस्कृति के संवर्धन को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। निज भाषा और संस्कृति के प्रति डुग्गर के जनमानस में नव चेतना के संचार के दुष्कर कार्य को एक 'मिंशन' के रूप में संचालित करते हुए शास्त्री जी दशकों तक सक्रिय भूमिका निभाते रहे। डोगरों की अस्मिता को सप्राण करने के लिए उन्होंने लेखकों कवियों का एक ऐसा उत्साही-काफिला तैयार किया जिसने आगे चल कर न केवल डोगरी भाषा तथा साहित्य को समृद्ध बनाया अपितु राष्ट्रीय एवं संवैधिनिक स्तर पर उसे मान्यता भी दिलवाई।

शास्त्री जी प्रारम्भ से ही युवा लेखकों को डोगरी साहित्य की ओर प्रवृत्त करते आ रहे हैं। अनेक लेखकों को उन्होंने डोगरी संस्था का मंच प्रदान किया और उनका उत्साहवर्धन किया। अनेकों नव लेखकों के काव्य-संग्रहों की भूमिकाएं लिख कर उन्हें आशीर्वाद दिया। डोगरी साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए उन्होंने डोगरी संस्था के अनेक प्रकाशनों का सम्पादन किया। विशेषतया संस्था के मुख-पत्र 'नमी चेतना' में उन्होंने युवा लेखकों की रचनायों के प्रकाशन में विशेष रूचि ली। जब भी कोई युवा प्रतिभा सामने आती, शास्त्री जी खुले मन से उसका स्वागत करते। प्रारम्भिक दौर में जब डोगरी साहित्य की अनेक विधायों में अपेक्षित मात्रा में साहित्य उपलब्ध नहीं था तब शास्त्री ने संस्कृत, हिन्दी तथा अनेक भारतीय भाषायों के प्रतिष्ठित लेखकों की कालजयी रचनाओं का डोगरी में स्तरीय अनुवाद करके डोगरी साहित्य की विपन्नता दूर करने का सद्प्रयास किया। उससे न केवल नव हस्ताक्षरों को लेखन की प्रेरणा प्राप्त हुई अपितु उनका मार्ग दर्शन भी।

सन् 1969-70 की बात है। धर्मयुग में, मेरी कहीं भी छपने वाली पहली रचना 'ललिता दित्य के मार्तण्ड' प्रकाशित हुई। इसके बाद सारिका में 'शहतूत' तथा धर्मयुग में ही 'टापू का आदमी' कहानियां प्रकाशित हुई। इन कहानियों के प्रकाशन पर शास्त्री जी ने अपनी प्रतिक्रिया भेजते हुए मुझे एक पोस्टकार्ड भेजा जिससे बढ़कर प्रेरक शब्द मैंने आज तक नहीं सुने। उन्हीं दिनों शास्त्री जी के छोटे भाई और डोगरी के यशस्वी कथाकार, प्रथम साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता नरेन्द्र खजूरिया का आकस्मिक निधन हुआ था जिस ने शास्त्री जी तथा उनके परिवार को भीतर तक हिला दिया था। अपने पत्र में शास्त्री जी ने लिखा – 'आपकी तीन कहानियां पढ़कर ऐसा महसूस हुआ मानो नरेन्द्र की मृत्यु के घाव भरने लगे हैं।' इसके उपरान्त मुझे शास्त्री जी का प्रगाढ़ स्नेह प्राप्त हुआ और डोगरी में लिखने की प्रेरणा मिली। मेरे पहले डोगरी कथा संग्रह 'टापू दा आदमी' का प्रकाशन शास्त्री जी ने स्वयं अपनी देख रेख में करवाया।

नई पीढ़ी से शास्त्री जी को अगाध स्नेह है गोष्ठिओं में वे उनकी श्रेष्ठ रचनाओं की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं। डोगरी लेखकों की पिछली दो पीढ़ियों द्वारा किए गए लम्बे संघर्ष की दास्तानें बार-बार दोहराने का उनका उद्देश्य युवा रचनाकारों के समक्ष एक 'माड्यूल' रखना है ताकि वे अपने पूर्ववर्ती साहित्यकारों के ज्वलंत उदाहरणों से प्रेरणा ग्रहण करके अपनी रचनाधर्मिता को सुदृढ़ बना सके। 92 वर्ष की आयु में भी उनके जीवन की प्रेरक भगीरथ धारा निरन्तर बहती कई साहित्यकारों के मानस को सिंचित कर रही है। ●

(डोगरी समाचार एकांश, प्रसार भारती, रेडियो कश्मीर, जम्मू- 180001)

जम्मू विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर डोगरी विभाग द्वारा आयोजित विशेष कार्यक्रम में पदमश्री रामनाथ शास्त्री को उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के लिए सम्मानित करते हुए भूतपूर्व उपकुलपति प्रो. एम. आर. पुरी
(15 अप्रैल 2002)

प्रो० रामनाथ शास्त्री से मेरा परिचय

डॉ० सत्यपाल श्रीवत्स

प्रो० रामनाथ शास्त्री से मेरा परिचय 1954 ई० में डॉ० गङ्गादत्त जी विनोद के माध्यम से हुआ था। उन दिनों मैं जम्मू नेशनल स्कूल में अध्यापन कार्य करने के साथ-साथ इण्टरमीडियेट परीक्षा की तैयारी भी कर रहा था। प्रो० शास्त्री के सम्पर्क में आने से मेरा भी डोगरी संस्था के कार्यालय (पक्का डंगा) में आना-जाना आरम्भ हुआ। मैं प्राय: प्रारम्भ में अपनी कुछ झिझक के कारण सीधा डोगरी संस्था में न जाकर शास्त्री जी की फत्तू चौगान में मंगे की दुकान के सामने प्रतीक्षा किया करता था। जब शास्त्री जी वहाँ पहुँच कर चाय का प्याला पीने लगते तो मैं भी तुरन्त उनके पास पहुँचकर पहले चाया पान का आनन्द लेता और फिर उनके साथ डोगरी संस्था के कार्यालय में पहुँचकर वेदपाल दीप, केहरि सिंह मधुकर, दीनू भाई पन्त और यश शर्मा आदि उस समय के प्रसिद्ध युवा कविओं की रचनाएं सुनकर उनका रसास्वादन करता।

कुछ दिनों के बाद प्रो० शास्त्री ने मुझे कहा – कि यदि यहाँ आते हो तो इन साहित्यकारों से प्रेरणा लेकर कुछ लिखो भी। तभी तो तुम्हारा यहाँ आना सार्थक होगा। अन्यथा समय व्यर्थ में गंवाने का कोई लाभ नहीं।

प्रो० शास्त्री का वह प्रेरणा दायक वाक्य मेरे भीतर गम्भीर प्रभाव डाल गया। परिणामत: मैंने अपना पहला लेख – 'डोगरी लोक गीतों में विरह वेदना' लिखा और डोगरी संस्था में एक दिन साहित्यकारों के सामने पढ़ा। यद्यपि वह मेरा प्रथम प्रयास था तो भी सभी ने उसकी सराहना की।

उन दिनों मुझे यह अनुभव करके आश्चर्य होता था कि शास्त्री जी डोगरी संस्था के मन्त्री के रूप में भी इतना कार्य करते हैं, कॉलेज में पढ़ाते भी हैं और कई सामाजिक कार्य कलापों में भी भाग लेते हैं। फिर भी अपने गद्य, पद्य अनुवाद आदि अनेक प्रकार के लेखन के लिए समय निकाल लेते हैं। निश्चय ही वह बड़े कर्मठ है।

कुछ दिनों के बाद जब में सनातन धर्म कन्या पाठशाला, जुलाहका मोहल्ला में नियुक्त हुआ तो उक्त विद्यालय की प्रबन्ध समिति के सचिव हकीम परशुराम नागर ने मुझे गांधी भवन जम्मू में रहने के लिए नि:शुल्क कमरा भी दे दिया। वहां रहने का मुझे एक लाभ यह भी हुआ कि उस भवन के एक भाग में स्थित डोगरा आर्ट गैलरी में

नियुक्त (क्यूरेटर) पं. संसार चन्द्र बड़ू के पास प्रो० शास्त्री प्राय: नित्य प्रति आते थे। इसलिए मेरा इनके साथ नित्य मिलना ही नहीं होने लगा अपितु मेरी इण्टरमीडियेट की परीक्षा की तैयारी में भी इनसे निरन्तर पथ प्रदर्शन मिलने लगा, जिससे मुझे बड़ा लाभ हुआ, विशेषकर 'Glimpses of life' पुस्तक के कुछ पाठ समझने में।

जब मैं राजकीय कॉलेज पुंच्छ में चार वर्ष (1962-1966) अध्यापन कार्य करने के बाद कुछ समय एम. ऐ. एम. कॉलेज जम्मू में कार्य करने के बाद कठुआ पहुँचा तो समय-समय पर प्रो० शास्त्री के प्रेरणादायक पत्र प्राप्त करके लेखन कार्य के प्रति जागरूक होता रहा।

सन् 1969 ई० में जब डोगरी संस्था जम्मू ने अपना रजत जयन्ती समारोह आयोजित करने का कार्यक्रम बनाया तो मुझे प्रो० शास्त्री ने पत्र लिखकर-'डुग्गर दे सांस्कृतक मान चित्रै 'च भड्डू, बलौर ते बसोहली दा जोगदान' आलेख तैयार करने के लिए कहा। उपयुक्त सामग्री के अभाव में वह लेख लिखना मेरे लिए एक चुनौति पूर्ण कार्य था, परन्तु प्रभु कृपा से आलेख बहुत अच्छा बन गया। बाद में वह लेख संस्था के रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ में सम्मिलित किया गया (दे. पृ. 129-140)

जब मेरे मन में पी. एच. डी. डिग्री प्राप्त करने की तीव्र आकांक्षा जागी तो मैंने उसके बारे में प्रो० शास्त्री जी की सम्मत्ति चाही तो उन्होंने मुझे डॉ० अम्बा-प्रसाद सुमन के समान डोगरी कृषिकोश के बारे में शोध करके पी. एच. डी. डिग्री प्राप्त करने की सलाह दी। इसी विषय में बात करने के लिए मैं डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा के साथ भी भेंट कर चुका था। क्योंकि मन के किसी कोने में जम्मू से बाहर जाकर संस्कृत सम्बन्धी विषय पर ही शोधकार्य करके अपनी जिज्ञासा पूर्ण करने तथा संस्कृत भाषा के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करने की उत्कट इच्छा था, अत: विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की तथा अपने मित्र पं० मंगत राम शर्मा (वर्तमान में राज्य परिवहन मंत्री) एवञ्च अन्य सज्जनों के सहयोग से पूना विश्वविद्यालय के संस्कृत प्रगत अध्ययन केन्द्र के निदेशक डॉ० एस. डी. जोशी के योग्य पथ प्रदर्शन में शोध करके डॉक्टरेट की डिग्री प्राप्त करने में सफल हुआ। परन्तु मेरे लिए यह प्रसन्नता का विषय है कि शास्त्री जी के उपयोगी सुझाव एवं आशीर्वाद पूना में भी उनके पत्रों के माध्यम से प्राप्त होते रहे।

अन्त में यही कहना होगा कि प्रो० शास्त्री इस आयु में भी तो सभी डोगरी और डुग्गर प्रेमियों के लिए प्रेरणा स्रोत है। ●

सैक्टर : 5 प्लाट नं० : 47 रूपनगर, जम्मूतवी - 180013

श्री रामनाथ शास्त्री : डोगरी के मियां डीडो

वेद राही

जिस आंदोलन ने पिछले साठ वर्षों से अपनी सक्रियता और सत्यनिष्ठा के कारण डोगरी भाषा और साहित्य को वर्तमान उत्कर्ष तक पहुंचाया है उस में अनेक साहित्यकारों और बुद्धिजीवियों का योगदान रहा है परंतु यह बात निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि उसका नेतृत्व हमेशा श्री रामनाथ शास्त्री के हाथों में रहा। नेतृत्व करने की प्रतिभा उनमें नैसर्गिक है। मैंने भी कई वर्षों तक उनके साथ रह कर डोगरी संस्था का काम किया है। इसी लिए अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि उनकी अद्वितीय कर्मठता, विचारशीलता और मनोयोग के कारण ही नेतृत्व उनके हाथ में रहा। आज भी बढ़ती उम्र के बावजूद उनका मार्गदशर्न सब को प्राप्त है।

केवल सक्रियता के क्षेत्र में ही नहीं रचनात्मक रूप से भी श्री शास्त्री की उपलब्धियों को कम नहीं आंका जा सकता। उनका लिखा नाटक 'बावा जित्तो' डोगरी के आधुनिक नाटकों में प्रमुख है। बावा जित्तो पर ही उनकी आलोचनात्मक कृति डोगरी के आलोचना-साहित्य में विशिष्ट स्थान रखती है। उनके कथा-संग्रह पर साहित्य अकादेमी ने पुरस्कार प्रदान किया। उनकी कविताओं और गज़लों के संग्रह हमेशा डोगरी को समृद्ध बनाए रखेंगे।

मैं समझता हूँ श्री रामनाथ शास्त्री डोगरी भाषा और साहित्य के क्षेत्र के मियां डीडो हैं। दो सौ 'वर्ष पहले डुग्गर में मियां डीडो ने आत्मचेतना, आत्मसम्मान और निर्भीकता का संचार किया था। वैसा ही कार्य, वैसी ही सूझ और संक्लप से श्री शास्त्री ने वर्तमान युग में डोगरी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में किया है। आने वाली पीढ़ियां शास्त्री जी की उपलब्धियों के प्रति नतमस्तक रहेंगी और उन्हें हमेशा याद रखेंगी। ●

बी-2/35 सर्वोत्तम हाऊसिंग सोसाइटी, इरला ब्रिज, अंधेरी मुंबई-140058

कविता

बुझी नहीं मन की प्यास

डॉ० अशोक जेरथ

आकाश गंगा में रूपहले जुगनू सी
झिप झिप जल बुझ जाती हो
प्रत्यक्ष कभी तो मन में ढुक कर
मधुर राग सुनाती हो

नैपेथ्य में गूंजती आवाज़ तुम्हारी
फिर पता नहीं कहां गुम हो जाती हो!

अल्हड़ सी किशोरी की चितवन
अन्तस् में फिर फिर लहराती है
झिझकती आंखों को उठाना
होंठों का थिरकना, धीरे से मुस्काना

कहां थिर हुई यह प्रतिमा
मुड़ मुड़ मन को भाती है

पता नहीं कब बाहें फैलीं
पता नहीं कब आगोश भरी
बूंद बूंद टपकती चांदनी
मन आतुर कर जाती है।

उंडेल गया सौंदर्य कोई
भर भर रजत प्यालों में
बहा गया खुशबुओं के मंज़र
अपने ही ख्यालों में

खूब पिआ अमृत भर भर
बढ़ती गई स्वप्नों की आस
अंजुलियां भर भर स्नेह मिला
पर बुझी नहीं मन की प्यास। ●

केंद्र निदेशक, आकाशवाणी,
शिमला–171 004

दो कविताएं

चाहत

हर हाल में

विनीता जोशी 'वीनू'

नीले आकाश के
पर्दे बनाकर
तुम्हारी खिड़कियों में टाँक दूं,

पलंग पर बिछा दूं
धूप की चादर,

बीनती रहूँ
तुम्हारे लिए
ख्वाबों के नये-नये स्वेटर,

संवार दूं सलीके से
ये बिखरा हुआ घर
काश!
कभी पूरी हो सकती
ये चाहत! ●

पैंसिल से लिखे
शब्दों की तरह
मिटा देना
मेरी गुस्ताखियों को,

मेरी यादों को संभाले रखना
पुराने ज़ेवर की तरह।

मैं मौसम जैसे
बदल भी जाऊँ
मुझे हर हाल में
तुम गहराई से
महसूस करना। ●

• तिवारी खोल, पूर्वी, पोखरखाली,
अल्मोड़ा - 263601 उत्तरांचल
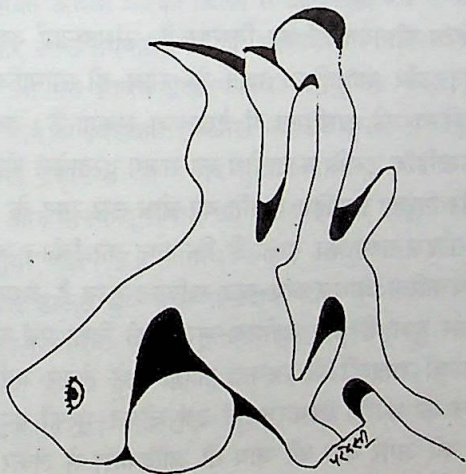
मानव मूल्य और साहित्य-सृजन की प्रासंगिकता

डॉ. राजेश चन्द्र पाण्डेय

प्रत्येक युग परिवर्तित चिंतन और नूतन मूल्यों का प्रतिनिधि होता है। मानवीय सभ्यता के उद्‌भव एवम् विकास से लेकर वर्तमान युग तक अनेक चिंतन सूत्र सघन रूप में देखे जा सकते हैं, जिन्होंने समय-समय पर जन-मानस और युग-चेतना को मथा है। आधुनिक युग (जिसके हम आधुनिक होने का दावा कर रहे हैं) का चिंतन-धरातल भी सर्वथा नूतन है। निरंतर परिवर्तित हो रहे मानव-मूल्य और जीवन की क्षण-प्रतिक्षण परिवर्तित अवधारणाओं के बीच हम नूतन आदर्शों की सृष्टि कर रहे हैं। दरअसल आज हम विश्व को जिस भौतिकवादी एवम् बाज़ारवादी नज़रिये से देखने की प्रक्रिया से गुज़र रहे हैं उसने हमें एक नई दृष्टि प्रदान की है। हम परिवर्तित मानव मूल्यों के बीच जीवन की नई परिभाषा को तलाशने का कार्य कर रहे हैं। Global World, World Market, भूमंडलीकरण, विश्व संचार-तंत्र आदि जैसे शब्द आज हमारी जीवन-संस्कृति के परिचायक हो चुके हैं। एक तरह से अगर कहा जाय तो यह कि हम विश्व-जीवन-शैली से जुड़ चुके हैं। इस सम्पूर्ण परिदृश्य का प्रभाव हमारे साहित्य पर किस तरह पड़ रहा है यह चिंतन का विषय है।

वस्तुतः साहित्य संभावनाओं का विस्तार है। संभावनाएँ असीम हैं। मानवीय जीवन के व्यक्तिगत और सामाजिक पक्षों के साथ ही सामाजिक परिदृश्यों का प्रतिपल निदर्शन साहित्य की असीमता में देखा जा सकता है। वह विदित सत्य है कि प्रत्येक देश का साहित्य उसके कालबोध का सजग दस्तावेज होता है। इसी कारण काल की सहज़ और निरंतर प्रवाहित स्थिति का बोध उस राष्ट्र के साहित्य-अध्ययन से होता है। इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि राष्ट्र का चिंतन जब-जब परिवर्तित हुआ है, राष्ट्र का वैचारिक आधार जब-जब खण्डित हुआ है अथवा जब भी जीवन के मूल्यों में परिवर्तन हुआ है, तब साहित्य-सृजन की दिशा एवं स्वरूप में परिवर्तन हुआ है। ई. पू. 15वीं शताब्दी के संस्कृत साहित्य से लेकर वर्तमान युग तक के साहित्य में परिवर्तन का कारण विचारधाराएं एवं जीवन-मूल्यों का परिवर्तन ही रहा है। हिन्दी साहित्य की अगर बात की जाय तो आदिकाल से लेकर वर्तमान युग तक

के सभी संदर्भों को ध्यान से देखने पर उपर्युक्त विचार प्रासंगिक सिद्ध होता है। यह सत्य केवल भारतीय साहित्य ही नहीं अपितु विश्व साहित्य के संदर्भ में भी प्रासंगिक और उचित है। दरअसल साहित्य की मूल वस्तु मानव-जीवन की क्रियाविधियाँ हैं और किस रूप में मानव की चिंतन-प्रक्रिया बदलती है, कैसे सृजनात्मक साहित्य की वस्तु परिवर्तित होती है और कितना विषय प्रभावी होता है यह सब कुछ जीवन-मूल्यों पर निर्भर करता है।

आदिकालीन साहित्य की पृष्ठभूमि युद्ध के वातावरण की है और राज्याश्रय की परम्परा यहां प्रभावी है। इस कारण सर्वत्र युद्ध और हिंसा का प्रभाव जन-जीवन के मानस पटल पर अंकित रहा। परिणामस्वरूप जो जीवन-शैली तत्कालीन संदर्भों में व्याप्त थी उसका प्रभाव सर्जनात्मक साहित्य पर पड़ा और इस युग का साहित्य युगीन मूल्यों का प्रदर्शक बना। इसी प्रकार भक्तिकाल का साहित्य भी युगीन जीवन-मूल्यों और आदर्शों से संयुत है। दीनता और विषाद की भावना के बीच लोक-मंगल के विराट मूल्यों की स्थापना तत्कालीन साहित्य के माध्यम से हुई। लेकिन रीतिकाल की श्रृंगारिक भावना अपनी सौन्दर्य की अबाध लिप्सा के कारण सदैव मानवीय अस्तित्व पर नये सिरे से सोचने को विवश करती है। इन सभी परिदृश्यों में एक बहुत बड़ा परिवर्तन दिखायी पड़ता है जब भारतेन्दु युग का आविर्भाव होता है। भारतेन्दु और उनके मंडल के सहयोगी लेखकों ने सामाजिक स्वतंत्रता की चेतना का पक्ष-पोषण किया और साहित्य को एक नितांत नवीन रूप दिया।

वस्तुतः मानवीय अस्तित्व की जो परिभाषा साहित्य में दीखती है, उस पर व्यापक विमर्श आधुनिक काल में हुआ। क्योंकि आदिकाल का साहित्य कहीं-न-कहीं आत्माभिव्यक्ति अथवा व्यक्ति चिंतन से आगे नहीं बढ़ सकता लेकिन भक्तिकाल में लोकमंगल और लोकनायकत्व की जो परम्परा एवं परिपाटी बनी उसने आधुनिक युग के साहित्य को नये विषय प्रदान किये। आधुनिक काल, जिसका प्रथम चरण भारतेन्दु युग के नाम से विख्यात है और जिसका दूसरा नाम पुनर्जागरण युग भी है, में साहित्य की नई प्रवृत्तियों का उन्मेष हुआ। भारतेन्दु और उनके सहयोगी लेखकों ने राष्ट्रीय चरित्र और मानवीय समाज की जो परिभाषा प्रस्तुत की उसमें मानव-मूल्यों की तलाश दिखायी पड़ती है। साहित्य में इस आधुनिकता की प्रवृत्ति के उदय एवं विस्तार पर प्रकाश डालते हुये सुधी समीक्षक डॉ० सुरेश चन्द्र पाण्डेय ने लिखा है- ''आधुनिकता काल बोधक संज्ञा न होकर एक प्रवृत्तिमूलक या भावबोधक अभिधा है। इस प्रवृत्ति का उन्मेष युरॅप की फ्रांस क्रांति के पश्चात् हुआ, जिसमें सामंतवाद का अंत और प्रजातंत्र का बीजारोपण हुआ। साथ ही सामाजिक, नैतिक, आर्थिक,

वैयक्तिक जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तर्कबोध ने परम्परा और रूढ़ि का स्थान लिया। भारत में 1857 की स्वातंत्र्य महाक्रांति के आसपास इस आधुनिक चेतना के स्पंदन से भारतीय मानस उद्‌बुद्ध हुआ और सामाजिक-धार्मिक पुनरुत्थान के पुरोधा स्वामी दयानंद सरस्वती, राजा राम मोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द की श्रृंखला इसे अग्रसर करती रही। भारतेन्दु के काल में इसी चेतना का समावेश दिखायी पड़ता है। प्राचीन वैभव की प्रतिष्ठा, सांस्कृतिक वैभव का पुनरुत्थान, उसकी पुनः प्रतिष्ठा की तीव्र लालसा, निजभाषा, निजदेश और निजता के सारे पूंजीभूत स्वाभिमान साहित्य के विषय वस्तु बने।''

यह कथन आधुनिक काल के आरम्भ में मानवीय मूल्यों के स्वरूप, उसके निर्माण की स्पष्ट स्थिति का बोध कराता है। लेकिन जैसे-जैसे हम अपने को स्वतंत्र महसूस करते गये हमने अपने लिये जीवन की नई सरणियों का प्रयोग और निर्माण शुरू कर दिया। साहित्य का विकास इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। आधुनिक युग की शुरूआत और विकास के दौर में साहित्य ने कितने नये मानवीय-मूल्यों को स्वीकारा और कितनी नूतन कोटियों को गढ़ा इसका प्रमाण हमें आधुनिक काल के विविध साहित्यिक स्वरूपों में मिलता है। कहने का आशय यह है कि मनुष्य के जीवन-स्तर और चिंतन-धरातल का परिवर्तन साहित्य को प्रभावित करता गया और उसकी दिशायें निर्मित होती गयी। द्विवेदी युग से लेकर वर्तमान युग तक का साहित्य इस विकासवादी चिंतन का परिणाम है।

आधुनिक युग, जिसमें मानवीय मूल्यों का संकट सबसे बड़ा है, चिंतन के गहन धरातल की मांग करता है। वस्तुतः आधुनिक युग ''मूल्य-विघटन का युग'' है, जिसके पीछे मानव अस्तित्व की एक सशक्त पृष्ठभूमि रही है, किंतु आज के संदर्भों में जीवन की परिभाषा और उस परिभाषा को सर्जित करने वाला साहित्य अत्यंत दुरुह है। इस संदर्भ में डॉ. धर्मवीर भारती का चिंतन प्रासंगिक है कि ''आधुनिक संकट की प्रकृति का निरूपण करते हुए यह स्पष्ट किया जा चुका है कि यह केवल आर्थिक, राजनीतिक या सामाजिक संकट नहीं वरन् मानव जीवन के मौलिक प्रतिमानों का संकट है। इसलिये साहित्य के प्रसंग में इसका विश्लेषण अनिवार्य है।''

वस्तुतः मानव-मूल्य और उसका निर्धारण आज के साहित्य की बहुत बड़ी चुनौती है। इस चुनौती का हम सहज अनुभव कर सकते हैं। क्योंकि जितनी तेजी से मानवीय मर्यादाओं की परिभाषा बदल रही है या सिमट रही है, उसके बीच मानवता की चिंता करना एक बड़ी चुनौती बन गया है। और जब जबकि प्रश्न यह है कि क्या मानवीय मूल्य आज के समय में शाश्वत और प्रामाणिक हैं?

तब हमें मानवीय अस्तित्व सबसे अधिक संकटग्रस्त दिखता है। और निःसंदेह जब मानवीय अस्तित्व ही संकट में होगा तो साहित्य की दिशा क्या होगी यह प्रासंगिक है। अगर हम पूर्व के संदर्भों को देखें तो सहज की यह लक्ष्य किया जा सकता है कि समय-समय पर मानवीय-अस्तित्व और मानवीय-चिंतन को परिभाषित करने वाले वाद एवं विचारधाराएँ साहित्य में अस्तित्व में आये। मार्क्सवाद, समाजवाद, अस्तित्ववाद, नवमानवतावाद, मनोविश्लेषणवाद, गाँधीवादी विचारधारा, बुद्ध दर्शन, अरविन्द दर्शन आदि के माध्यम से मानव-मूल्यों की अलग-अलग परिभाषायें निर्मित की गयीं। यद्यपि इन विचारधाराओं से प्रभावित/प्रेरित साहित्य उच्चकोटि का है और इनमें प्रभावोत्पादकता अत्यधिक है, लेकिन मानवीय अस्तित्व और साहित्य की कोई सार्वभौमिकता इनके माध्यम से ढूँढना असंभव सा है।

दरअसल आज जिस पीढ़ी द्वारा साहित्य रचा जा रहा है और जिस पीढ़ी के लिये रचा जा रहा है क्या उसके बीच मूल्यों की कोई परस्पर सहानुभूति है। अर्थात् आज की युवा पीढ़ी (कुछ प्रतिशत को अगर छोड़ दे) क्या उन संवेदनाओं का वहन कर पा रही है जो एक स्वस्थ और संस्कृतनिष्ठ समाज तथा श्रेष्ठ साहित्य की समझ विकसित कर सके। आज की पीढ़ी जो 'बर्गर और चीज़ कल्चर' तथा 'हाइपर टेंशन और वर्क प्रेशर कल्चर' की अगुवा है उससे किन मूल्यों के निर्माण अथवा संरक्षण की आशा की जा सकती है। और जब मानवीय अस्तित्व या मानवता की परिभाषा ही खंडित दिखायी पड़े तो उस राष्ट्र का साहित्यिक भविष्य का होगा? असल में हमारे आचरण और विवेक के बीच जो खाई पड़ चुकी है, उसने हमारे जीवन-मूल्यों के समक्ष एक बड़ा संकट पैदा कर दिया है। इस पीड़ा का बोध बहुत पहले टी. एस. ईलियट ने अपनी एक कविता द्वारा कराया था-

'Between the idea
And the reality
Between the motion
And the act
Falls the shadow.

कार्ल यास्पर्स इसी संकट को व्यवस्थाओं और सिद्धान्तों का संकट मानता है। जिसमें मानव के अस्तित्व और उसकी विकास की अनेक संभावनाओं की हत्या होता है। कवि मुक्तिबोध भी इस पीड़ा का अनुभव करते हैं और मूल्यों हेतू संघर्षरत मानवीय पीढ़ी की सुखी होने की चिंता में लीन हैं-

'मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में
सभी मानव
सुखी, सुंदर व शोषण मुक्त
कब होंगे?

× × ×

दसअसल चाहे ईलियट की चिंता हो, यास्पर्स की चिंता हो या मुक्तिबोध अथवा किसी अन्य कवि की, यह चिंता सामान्य नहीं है, क्योंकि साहित्यकार को युगद्रष्टा एवं युगमानस का दायित्व निर्वाह करना होता है और इस कारण उससे अपेक्षा अधिक होती है और इसी कारण वह इतनी बड़ी युगीन चिंताओं से ग्रस्त होता है। क्योंकि साहित्यकार (महान् साहित्यकार) कब हमें एक युग से दूसरे युग और एक जीवन-सभ्यता से दूसरी सभ्यता तक की यात्रा करा दे हमें इसका पता ही नहीं चलता है।

वस्तुतः आज के साहित्य को अपने अस्तित्व निर्माण के पहले मानवीय जीवन-मूल्यों और परिवेश को भली-भाँति समझना-परखना होगा। क्योंकि साहित्य मानवीय-मूल्यों की सहज व्याख्या करता है और व्यापक अर्थों में वह सामाजिक जीवन का दस्तावेज है। अस्तु आज के इस भौतिक प्रगति के वातावरण में जब हम आधुनिकता की अंधी दौड़ में तेजी से भागते जा रहे हैं तब सबसे पहले हमारे सामने स्वस्थ मानवीय-मूल्यों को तलाशने की चुनौती है। क्योंकि यह बहुत बड़ा सत्य है कि हमें फिर से अपने मूल्यों की तलाश करनी होगी और साहित्य में प्रतिष्ठित करना होगा। और साहित्य को भी इसके योग्य बनना होगा। क्योंकि आज का साहित्य जिस बौद्धिक जातिवाद, दलित, सांप्रदायिक, स्त्रीवादी आदि आवरणों में ढक चुका है उसे अपने ऊपर से इन वादों का प्रभाव हटाना होगा। तभी एक स्वस्थ और सार्वभौम साहित्य की परिपाटी बन सकेगी और मानवीय-मूल्यों की रक्षा की जा सकेगी। आज जबकि साहित्य का पाठक सीमित होता जा रहा है, साहित्य की चिंतन धारा बदल रही है ऐसे में हम साहित्य के लिये व्यापक रूप की रचना करें, यह चिंतन और व्यापक बहस का विषय है। 21वीं शताब्दी का साहित्य किस मानवीय धरातल एवं मूल्य का साहित्य होगा यह राष्ट्रीय चिंता का विषय है क्योंकि प्रत्येक देश की पहचान उसके साहित्य और जातीय मिथकों से होती है, इसमें संदेह नहीं है। ●

वरिष्ठ प्रवक्ता, हिंदी विभाग, डी. वी. (पी. जी.) महाविद्यालय,
उरई (जालौन)-285001 (उ० प्र०)

पद्मश्री प्रो. रामनाथ शास्त्री को साहित्य अकादेमी दिल्ली द्वारा 'फैलोशिप' से सम्मानित करते हुए (बाएं से) साहित्य अकादेमी के सचिव प्रो. के. सच्चिदानंदन, अध्यक्ष श्री रमाकांत रथ, पद्मश्री प्रो. रामनाथ शास्त्री, मुख्यमंत्री श्री फारूक अब्दुल्ला तथा कल्चरल अकैडमी के सचिव बलवंत ठाकुर (2001 ई.)

चौथे अखिल भारतीय डोगरी लेखक सम्मेलन के अवसर पर
मुख्यमंत्री फारूक अब्दुल्ला द्वारा सम्मानित होते हुए पद्मश्री प्रो. रामनाथ शास्त्री

R.N.I. No. 58940/93 अप्रैल 2006 Postal Reg. No. JK-85/2006
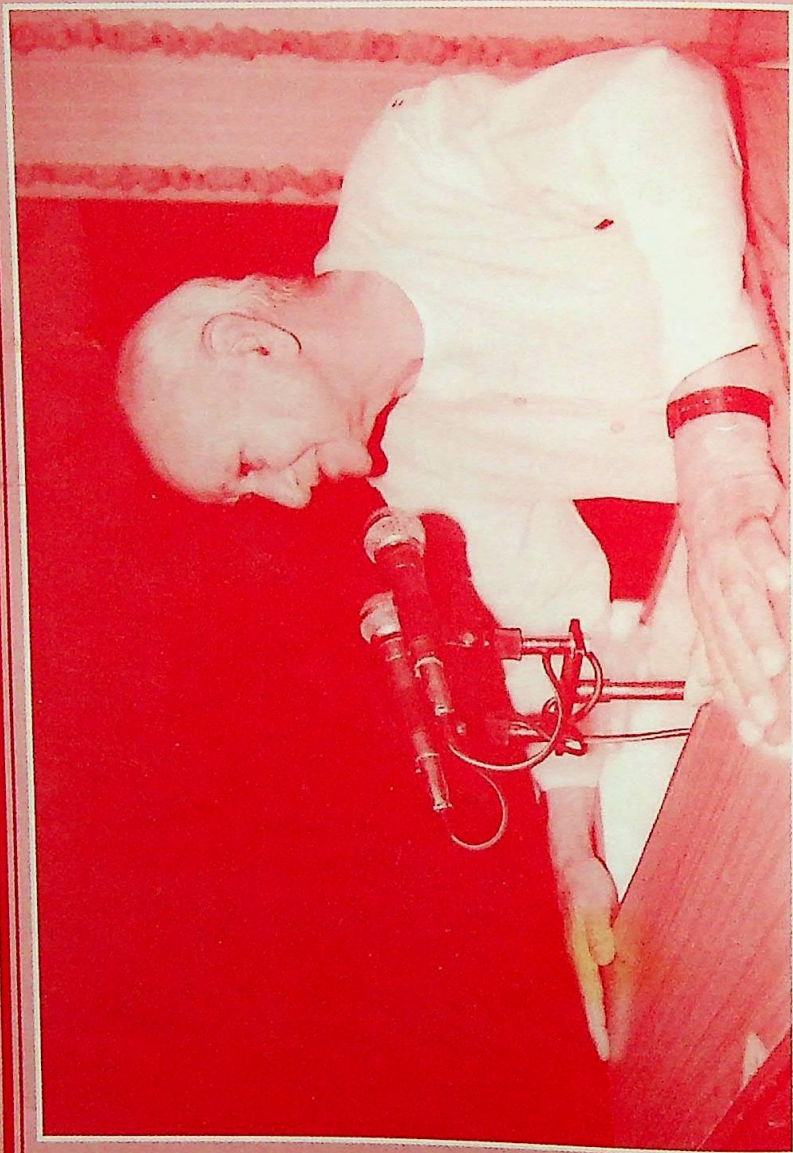
पद्मश्री रामनाथ शास्त्री डोगरी विभाग जम्मू वि. के एक भव्य साहित्यिक समारोह में (2004 ई.)